E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

भारत में जातिभेद की समस्या : जोतिराव फुले के विचार

नसीब सिंह
शोधार्थी इतिहास
जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर

डॉ॰ ममता सिंह राजावत
शोध निर्देशिका
सहायक प्राध्यापिका
महाराजा मानसिंह महाविद्यालय,
ग्वालियर (म॰ प्र॰)

Paper Received date

05/05/2026

Publishing Date

10/05/2026

DOI

https://doi.org/10.5281/zenodo.20732786

IMPACT FACTOR 5.924

19वीं शताब्दी में भारतीय समाज सामाजिक कुरीतियों में जकड़ा हुआ था जिसके चलते दबे– कुचले लोग एवं महिलाएं सामाजिक अन्याय एवं भेदभाव के कारण अभिशापपूर्ण जीवन जीने के लिए बाध्य थें । समाज में व्याप्त इस जड़ता एवं रूढ़ीवाद को दूर करने के लिए 19वीं शताब्दी के अनेक समाज सुधार आन्दोलनों का जन्म हुआ । लगभग आधी शताब्दी तक देश में समाज सुधार के ऐसे आन्दोलन काफी तेजी से चलें। ऐसे ही समाज सुधार आन्दोलनों में से एक आन्दोलन का सूत्रपात महान सुधारक जोतिराव फुले (1827–1890) ने महाराष्ट्र में किया था ।

जोतिराव फुले, जिनका वास्तविक नाम जोतिबा फुले था, का जन्म 11 अप्रैल 1827 ई॰ में पूना में माली नामक जाति से संबंधित एक किसान परिवार में हुआ था । फुले ग्रामीणों कुनबी–किसानों, खेतिहर मजदूरों, शूद्रों–अतिशूद्रों एवं नारी जाति समेत सम्पूर्ण 'बहुजन समाज' के मसीहा एवं सुधारक थें । उन्होंने वर्णव्यवस्था तथा जातिभेद तथा इसके श्रोत ब्राह्मण धर्म एवं संस्कृति के विरुद्ध 19वीं शताब्दी में एक शक्तिशाली **समाज सुधार आन्दोलन** खड़ा किया । उन्होंने दलितों और महिलाओं के लिए शिक्षा के सदियों से बंद दरवाजे खुलवायें । उन्होंने समाज के कमजोर वर्गों के लोगों को सामाजिक दासता से मुक्त कराकर उनके मानवाधिकार बाहल कराने के प्रयास किए तथा उन्हें सम्मानपूर्ण व गरिमापूर्ण जीवन जीना सिखाया । ***जोतिराव फुले : दी फादर ऑफ इण्डियन सोशल रिवोल्यूशन*** के लेखक जीवनीकार धनंजय कीर ने अपनी कृति में लिखा है कि "जोतिराव फुले भारतीय समाज व्यवस्था की समता, न्याय एवं तर्क के आधार पर पुनर्रचना करना चाहते थें । यही उनका लक्ष्य था जिसमें उन्हें काफी हद तक सफलता मिली।"[1]

महात्मा फुले स्वयं जातिभेद का दंश युवावस्था में अपने एक ब्राह्मण मित्र की बारात में झेल चुके थें । शूद्र जाति का होने के कारण उनको अपमानित करके बारात से निकाल दिया गया था । तब उनके पिता ने उनको समझाया था कि शूद्र जाति के लोग ब्राह्मणों की बराबरी नहीं कर सकतें, क्योंकि ब्राह्मण जातीय पदसोपान में सबसे ऊपर हैं ।[2] चूंकि जोतिराव एवं प्रबुद्ध व्यक्ति थें, इसलिए सही व गलत का अन्तर जानते थें । यह बात उनको तुरन्त समझ में आ गयी थी कि जाति व्यवस्था स्वस्थ सामाजिक जीवन के लिए मुसीबत का कारण है और सांस्कृतिक एकता की शत्रु है । वर्चस्ववाद ही इसके लिए उत्तरदायी था । अतः भारत में **वास्तविक समाज सुधार** लाने के मार्ग में सबसे बड़ी चुनौति जाति व्यवस्था एवं इसके लिए उत्तरदायी वर्चस्ववादी धर्म एवं विचारधारा ही है । इसीलिए फुले जाति व्यवस्था पर आधारित हिन्दू समाज व्यवस्था और उसे संचलित करने वाली वर्चस्ववादी विचारधारा को निरस्त करते हुए **'रेडिकल सामाजिक समरसता'** लाने की बात करते थें ।

जैसा कि बतलाया जा चुका है, फुले ने अपने सामाजिक दर्शन के अन्तर्गत यह स्थापित किया कि राजनैतिक दासता से सामाजिक दासता कहीं अधिक खराब होती है ।[3] उन्होंने अपनी पुस्तक ***'गुलामगिरी'*** में लिखा कि मेरा उद्देश्य दबे–कुचले बहनों–भाइयों को केवल यह बताना नहीं है कि वे ब्राह्मणों द्वारा किस तरह ठगे गये हैं, बल्कि यह बताना भी है कि किस तरह उसी धर्म की आड़ में वे वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत गुलाम बना दिए गए हैं, जिस धर्म का वे स्वयं एक भाग हैं ।[4]

लेकिन वर्ण व्यवस्था जनित 'गुलामी की इस व्यवस्था' को चुनौति देना तत्कालीन युग में बहुत कठिन था । इस लिए फुले ने निम्न जातियों व दलितों को जागृत एवं शिक्षित होने का आह्वान किया ताकि वे इस व्यवस्था को बदल सकें ।[5] उन्होंने 'जातिभेद की मक्कारी' के लिए उत्तरदायी वर्चस्ववादी धर्मग्रन्थों की छानबीन करने का सुझाव देते हुए लिखा कि "धर्मग्रन्थों के बारे में तुम लोगों को निश्चित तर्कपूर्ण खोज करनी चाहिए । तुम लोग अंधों की तरह आंखें मूंद करके (उनको) क्यों मानते हों? यह शूद्रों की सीधी मूर्खता है ।"[6] इसी तरह फुले ने "जातिभेद विवेकासार" नामक लेख में माध्यम से जातिभेद पर प्रकार करते हुए लिखा था कि किस तरह ब्राह्मणों ने जातिभेद की दीवारें खड़ी कर हिन्दू समुदाय को विभाजित कर दिया है । चूंकि जातिभेद समानता, स्वाधीनता और बुद्धि की कसौटी पर खरा नहीं उतरता

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

है, इसलिए इसको "समाप्त करना अत्यंत आवश्यक है ।"[7] जातिभेद का खण्डन करते हुए ***'सार्वजनिक सत्यधर्म पुस्तक'*** में जोतिराव में तर्क दिया कि पशु–पक्षी आदि प्राणियों में यदि जातिभेद नहीं है, तो मानव प्राणी में जातिभेद क्यों? ईश्वर ने सभी को समान बनाया है । मानव की बुद्धि कम–ज्यादा हो सकती है, लेकिन बुद्धि अनुवांशिक नहीं होती।[8] फुले कहते हैं : **"बृहस्पती जैसे मनुष्य की सन्तान स्वभाव से कभी–कभी सद्गुणी नहीं निकली । इसी प्रकार से धूर्त आर्य भटों की सन्तानें हमेशा ही शंकराचार्य के समान नहीं होती । ऐसे ही, दलितों या निम्न जातियों के बच्चे सद्गुणी होने पर शंकराचार्य के समान महामुनि नहीं होंगें, ऐसी बात न्यायप्रिय व्यक्ति नहीं कह सकता** महात्मा फुले का दृढ़ मत था जाति व्यवस्था मनुष्य ने बनाई है, ईश्वर ने नहीं । जाति की रचना वास्तव में स्वयं ब्राह्मणों ने की है जो पूर्णत विषमता पर आधारित है । इस व्यवस्था ने शूद्रादि–अतिशूद्र जातियों का भारी शोषण किया है । इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए झूठे धर्मग्रन्थ लिखे गयें । फुले के ऐसे तमाम जातिभेद विरोधी विचार कालान्तर में सही साबित हुए, हालांकि उनके युग में उन (विचारों) का रूढ़ीवादियों द्वारा कड़ा विरोध किया गया था।[9]

फुले जो कहते थें, उस पर स्वयं अमल करते थें । इसका एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण देखने को मिलता है । उन्होंने 1868 में अपने घर के पास स्थित पीने के पानी का एक हौज अछूतों के लिए खोल दिया ।[10] उस युग में महाराष्ट्र में महार, मांग, चमार, चाण्डाल, अन्त्यज आदि निम्न जातियों के लोगों को ब्राह्मण लोग और उनके प्रभाव में आकर क्षत्रिय व वैश्य यहां तक कि शूद्र वर्ण के किसान भी अछूत मानते थें तथा उनकी छाया से भी दूर भागते थें । वे उनको कुंओं व तालाबों से पानी तक नहीं भरने देते थें। ऐसे में, फुले ने इस जातिभेद पर आधारित, परिपाटी को समाप्त करने हेतु एक बड़ा उदाहरण प्रस्तुत किया । इसी तरह नगरपालिका के अधिकारी भी जाति प्रथा का पालन करते थें तथा दलितों के साथ भेदभाव करते थें । वे गरीबों–अछूतों की बस्तियों में पानी पहुंचाने तथा सड़क बनाने के काम पर ध्यान नहीं देते थें । परन्तु फुले जब नगरपालिका के सदस्य बनें, तब उन्होंने दलितों व निम्न जातियों के कल्याण के लिए कई कदम उठाऐं । उन्होंने नगरपालिका के सदस्य के रूप में दलितों की बस्तियों में पानी पहुंचाने का तथा सड़कें बनवाने का भागीरथी कार्य किया ।[11]

जातिभेद के विरुद्ध अपने सामाजिक संघर्ष को आगे बढ़ाते हुए महात्मा फुले ने 15 मई 1848 को पुणे शहर की एक गरीब बस्ती में अछूतों के लड़के–लड़कियों के लिए एक पाठशाला की स्थापना की। शुरू में सगुणाबाई नामक एक दलित महिला भी इस स्कूल में अध्यापन का कार्य करती थी । उक्त स्कूल के अलावा फुले ने 3 जुलाई 1851 को पुणे में अण्णा साहेब चिपलूणकर के मकान में गरीब कन्याओं के लिए एक और पाठशाला प्रारम्भ की।[12] 17 सितम्बर 1851 एवं 15 मार्च 1859 को फुले ने पूना में दो और स्कूल स्थापित किए । बाद में उन्होंने पूना जिले में 18 अन्य स्कूल खोलें ।[13]

फुले के दबे–कुचले समूहों में आधुनिक शिक्षा के प्रसार के उपरोक्त प्रयोग उस दौर में इतने महत्त्वपूर्ण समझे गऐं कि स्वयं बम्बई के गवर्नर ने उनके शैक्षणिक कार्यों की जानकारी लंदन स्थिति ईस्ट इण्डिया कम्पनी के मुख्यालय में कार्यरत उच्च अधिकारियों को भेजी । बाद में सरकार की ओर से इन कार्यों के लिए उन्हें सम्मानित भी किया गया ।[14]

यह भी उल्लेखनीय है कि महात्मा फुले के द्वारा अंग्रेजी में हण्टर शिक्षा आयोग को शिक्षा से संबंधित 'स्टेटमेन्ट' के रूप में एक दस्तावेज 19 अक्तूबर 1882 को पेश किया गया था जिसमें उन्होंने जातिभेद की समस्या के संदर्भ में शिक्षा नीति से संबंधित कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये थें । इसमें उन्होंने देश में 'सार्वजनिक सामान्य शिक्षा' पद्यति लागू करने पर बल देते हुए कहा कि ऐसा करना जातिभेद से पीड़ित निम्न वर्ग के लोगों के लिए फायदेमन्द होगा:

"निम्न जाति के माने जाने वाले तथा मांग और महार जातियों के बच्चों को पाठशालाओं से वंचित रहना पड़ता है क्योंकि उनके बारे में लोगों में पहले से ही नफरत बसी हुई है । निम्न जाति के बच्चों को ऊंची जाति के बच्चों के साथ नहीं बैठाया जाता । उनके लिए अलग पाठशालाएं प्रारंभ की गई हैं, किन्तु वे बड़े शहरों में ही हैं । पूना शहर में जहां महार तथा मांग जाति के पांच हजार लोग बसते हैं, वहां केवल एक ही ऐसी पाठशाला है जिसमें उनके बच्चे पढ़ सकते हैं । लेकिन उस स्कूल में भी केवल तीस बच्चे ही उपस्थित रहते हैं । इसलिए मैं सरकार से निवेदन करता हूँ कि जिन–जिन गांवों में निम्न जाति के लोग बसते हों, वहां उनके बच्चों के लिए अलग से स्कूल खोलें जाएं क्योंकि जातिभेद के कारण (उनका) अन्य जाति के बच्चों के साथ बैठना (फिलहाल) संभव नहीं है ।"[15]

उक्त प्रतिवेदन में फुले ने यह भी कहा कि "यह बड़े दुख की बात है कि महार और मांग जातियों में से एक भी स्नातक नहीं है ।"[16] अतः सार्वजनिक शिक्षा को महत्त्व प्रदान किया जाए तथा प्राथमिक पाठशालाओं की संख्या में वृद्धि की जाए जिससे शूद्र–अतिशूद्रों के ज्यादा से ज्यादा लड़के–लड़कियों को स्कूल जाने का अवसर मिले । इसके लिए उन्होंने छात्रवृतियां व छमाही पुरस्कार देने तथा बारह वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए शिक्षा अनिवार्य कर देने का सुझाव रखा।[17] उन्होंने एक कविता में भी लिखा :

"शूद्र बच्चे–बच्चियों को स्कूल में भेजों ।
सुशील बनाओ, सभी कामों में ।
शूद्रों का फंड किस–किस को देना,

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

धूर्तों को पालना । जोती कहे ।"[18]

एक अन्य काव्य रचना में फुले उस दिन की कल्पना करते हैं जब महारानी विक्टोरिया भारत आएंगीं । तब वे दबे–कुचले वर्गों की ओर से निम्नलिखित सुझाव उनको देगें :

"सुझाना चाहता हूँ रानी को ।
भरोसा न करो ब्राह्मणों का ।
जानो उनके तर्कजाल को ।
हर जाति की जितनी हो संख्या
ओहदे हो उनको उतने।
यही है न्याय की रीति।[19]

महात्मा फुले ने जातिभेद को समाप्त करने हेतु इस बात पर भी जोर दिया कि सरकार द्वारा हर जाति से शिक्षकों की नियुक्ति की जानी चाहिए तथा केवल एक ही जाति (ब्राह्मण) के शिक्षकों को नियुक्त नहीं करना चाहिए । उनके अनुसार निम्न वर्गों से शिक्षक नियुक्त करने का परिणाम यह होगा कि वे किसान, मेहनतकश मजदूर और निम्न जातियों के बच्चों में घुल–मिल सकेंगें। इससे बच्चों को हर दृष्टि से लाभ होगा । साथ ही उन्होंने इस बात पर भी बल दिया कि "शिक्षा पर सरकार का पूर्ण नियंत्रण जरूरी है क्योंकि यह सामाजिक विकास की सीढ़ी है ।"[20] फुले का मत था कि व्यक्तिगत या जातिय आधार पर संचालित शिक्षण संस्थान दलित और शूद्र जातियों के साथ कभी न्याय नहीं कर सकतें ।[21]

इतना ही नहीं, फुले ने राजकीय सेवाओं में ब्राह्मण जाति के एकाधिकार को समाप्त करने की मांग की । जैसा कि हम पीछे जान चुके हैं, उनके अनुसार ब्राह्मणों का सरकारी सेवाओं में प्रभुत्व निम्न जातियों के साथ किए जाने वाले जातिभेद का एक बड़ा कारण था। इसलिए उन्होंने बार–बार यह बात सरकार के समक्ष रखी कि सभी धर्मों एवं जातियों के व्यक्तियों को सरकारी नौकरियों पर रखना चाहिए । इस सम्बन्ध में फुले ने कहा कि विभिन्न समुदायों व जातियों के व्यक्तियों को उनकी जनसंख्या के अनुपात के अनुसार नौकरी पर रखना चाहिए । फुले ने सुझाव दिया कि निम्न जातियों में से यथासम्भव योग्य लोगों का चयन करके उन्हें अच्छी तरह प्रशिक्षित किया जाए और फिर कुलकर्णी, पाटिल एवं अध्यापक आदि के पदों पर लगाया जाए ।[22] इस सम्बन्ध में फुले ने यह भी कहा कि यदि उचित अनुपात में सभी समुदायों व जातियों के कर्मचारी न मिलते हों तो सरकार को चाहिए कि वह उनके स्थान पर यूरोपियन कर्मचारियों की नियुक्तियां करें । इससे यह लाभ होगा कि ब्राह्मण कर्मचारियों को सरकार और अज्ञानी शूद्रों को नुक्सान पहुंचाने का मौका नहीं मिलेगा ।"[23] इस संबंध में फुले ने एक काव्य रचना में लिखा :

"एक जाति के खतरे से जगाया ।
शूद्रों को मैंने दरवाजा दिखाया ।
एक जाति के सब मिलकर देश को ठगते
शेष सारे मुंह तकते रहते ।
न करो एक जाति की भर्ती। जोतीराव कहते ।"[24]

यह उल्लेखनीय है कि महात्मा फुले द्वारा स्थापित समाज सुधार संगठन **सत्यशोधक समाज** के दरवाजे प्रत्येक जाति के लोगों के लिए खुले हुए थें । 'समाज' ने स्पष्ट घोषणा कर रखी थी कि "वह जाति–पांति, अस्पृश्यता, धर्म की संकीर्णता और मनुष्य द्वारा मनुष्य के हर प्रकार के शोषण के विरूद्ध है ।"[25] इस प्रकार उनका यह सामाजिक संगठन उच्च जातियों द्वारा निम्न जातियों के बौद्धिक शोषण तथा आर्थिक–सामाजिक–सांस्कृतिक 'गुलामगिरी' के विरुद्ध एक सशक्त जन–आंदोलन बनकर महाराष्ट्र में सामने आया ।

संदर्भ सूची

1. धनंजय कीर, **जोतिराव फुले : दी फादर ऑफ इण्डियन सोशल रिवोल्यूशन,** पापुलर पब्लिकेशन, बम्बई, पृ॰ 127.
2. योगमाया, **जोतिराव फुले : दर्शन एवं चिन्तन,** राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2004, पृ॰ 52.
3. वेद कुमार वेदालंकार, **महात्मा जोतिबा फुले,** महाराष्ट्र शासन, मुम्बई, 1996, पृ॰ 5.
4. धनंजय कीर, **पूर्व उद्धृत,** पृ॰ 111–113.
5. योगमाया, **पूर्व उद्धृत**, पृ॰ 53.
6. एल॰ जी॰ मेश्राम 'विमलकीर्ति' (सं॰), **जोतिराव फुले रचनावली,** खण्ड प, पृ॰ 115.

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

7. तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी, **जोति चरित,** नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2006, पृ॰ 24.
8. एल॰ जी॰ मेश्राम 'विमलकीर्ति', खण्ड–प्प, **पूर्व उद्धृत,** पृ॰ 114.
9. सरोज आगलावे, **जोतीराव फुले का सामाजिक दर्शन,** सम्यक् प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ॰ 44.
10. धनंजय कीर, **पूर्व उद्धृत,** पृ॰ 88.
11. **वही**, पृ॰ 82.
12. जियालाल आर्य, **जोतीपुंज महात्मा फुले,** प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2006, पृ॰ 20.
13. हेत सिंह वघेला, **भारतीय संस्कृति का विकास,** पृ॰ 220.
14. जियालाल आर्य, **पूर्व उद्धृत,** पृ॰ 20.
15. तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी, **पूर्व उद्धृत,** पृ॰ 51.
16. धनंजय कीर, **पूर्व उद्धृत,** पृ॰ 119.
17. हरि नरके, (सं॰) **महात्मा फुले : साहित्य और विचार,** महात्मा फुले चरित्र साधने प्रकाशन समिति, मुम्बई, 1993, पृ॰ 224.
18. एल॰ जी॰ मेश्राम 'विमलकीर्ति' (सं॰), **जोतिराव फुले रचनावली,** खण्ड–प्प, पृ॰ 243.
19. **वही**, पृ॰ 261.
20. कन्हैयालाल चंचरीक, **जोतिराव फुले,** प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2000, पृ॰ 124.
21. **वही**, पृ॰ 124.
22. धनन्जय कीर, **पूर्व उद्धृत**, पृ॰ 119.
23. एल॰ जी॰ मेश्राम 'विमलकीर्ति' (सं॰), **जोतिराव फुले रचनावली,** खण्ड ५, पृ॰ 211.
24. **वही,** पृ॰ 234.
25. आर॰ चन्द्रा व कन्हैयालाल चंचीरक, **पूर्व उद्धृत,** पृ॰ 46.